REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 9 | JUNE - 2018

व्याकरणाचार्य के रूप में पं. कामताप्रसाद गुरू का हिन्दी साहित्य को योगदान

डॉ. सुरजीत कौर
हिन्दी विभाग , ख़ालसा कॉलेज अमृतसर.

प्रस्तावना :

हिन्दी भाषा का व्याकरण लिखने का प्रारंभिक प्रयास विक्रम की १६ वीं शताब्दी में मिलता है। औरगज़ेब के शासन काल (१६४७–१६६७ ई0) में मिर्जा खां ने ब्रजभाषा का परिचयात्मक संक्षिप्त व्याकरण लिखा। प्रायः उसी समय हालैंड निवासी जोहन जोशुआ केटेलेर ने हिन्दुस्तानी का एक व्याकरण लिखा, जिसका परिचय डॉ0 सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने द्विवेदी अभिनन्दन ग्रंथ में 'हिन्दुस्तानी का सबसे प्राचीन व्याकरण' 'शीर्षक एक लेख में दिया था। डॉ0 ग्रियर्सन के मतानुसार यह व्याकरण १७१५ ई0 के आसपास किसी समय लिखा गया होगा, जो हालैंड के वाइडन नगर में १७४३ ई0 में द्रावीद मिलवा मिल्लिउस नामक पंडित द्वारा प्रकाशित हुआ। विदेशियों द्वारा लिखे, जिन अन्य व्याकरणों का उल्लेख प्राप्त होता है, उनमें – डॉ0 जान बोर्धविक गिलक्राइस्ट का 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' (१७६0) रोएबक का 'दि इंगलिश ऐंड हिन्दुस्तानी डिक्शनरी विथ ए ग्रामर प्रिफिक्स्ड' (१८१0) (नोट : इसका व्याकरण भाग फोर्ट विलियम कॉलेज में पढ़ाया जाता है।)

टेलर के मतानुसार उस समय का सर्वोतम, व्याकरण था – येट्स कृत 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' (१८२८) 'प्लाट्स कृत 'हिन्दुस्तानी ग्रामर' पादरी आदम साहिब का 'हिन्दी व्याकरण' (हिन्दी में लिखित) डंकन फोरबस का 'ए ग्रामर ऑफ दि हिन्दुस्तानी लैंग्वेज' जो लंदन से १८५६ ई0 में छपा था। इसकी एक प्रति नेशनल पुस्तकालय कलकता में रखी है।

पन्द्रह वर्ष बाद १८७0– ७१ ई0 में काशी के एक पादरी एथरिंगटन साहिब ने अंग्रेजी में हिन्दी का एक व्याकरण लिखा था जो अगले वर्ष में 'भाषा भास्कर' के नाम से हिन्दी रूपान्तरित होकर छपा। १८७५ ई0 में केलाग साहब का 'ए ग्रामर ऑफ हिन्दी लैंग्वेज' प्रकाशित हुआ, जिसका द्वितीय संस्करण १८६२ ई0 में छपा, जिसमें हिन्दी के व्याकरण के साथ ही तथाकथित उच्च हिन्दी , ब्रज और पूर्वी हिन्दी का भी विवेचन किया गया था।

विदेशियों द्वारा लिखित सभी व्याकरण–ग्रन्थों में केलाग का व्याकरण सर्वोत्तम स्वीकार किया जाता है। विदेशियों के द्वारा लिखा गया एक व्याकरण लल्लू जी लाल कृत 'दि ग्रैमेटिकल प्रिंसीपल आफ ब्रजभाषा' था, जो १८१0 ई0 में लिखा गया था।

हिन्दी व्याकरण के निर्माण का यह पहला दौर था, जिसमें विदेशी अथवा परदेशी विद्वानों ने विदेशियों और परदेशियों को हिन्दी सिखाने के लिए हिन्दुस्तानी या हिन्दी व्याकरण लिखे। युरोप निवासी पादरियों और भाषाशास्त्रियों के व्याकरण यूरोपीय भाषाओं के व्याकरण के नमूने पर लिखे गए थे और उनमें अधिकांश जनता की सामान्य बोलचाल की भाषा को ही आधार माना गया था । हिन्दी व्याकरण के निर्माण का दूसरा दौर विक्रम की बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से चलता है जब कि हिन्दी के विस्तृत भूखण्ड में जन–शिक्षा का प्रचार होने लगा । प्रारंभिक पाठशालाओं में छात्रों को हिन्दी भाषा बोलना और लिखना सिखाने के लिए पाठ्यक्रम में व्याकरण की आवश्यकता का अनुभव शिक्षाधिकारियों ने किया । प्रारम्भ में पादरी आदम साहब का व्याकरण ही काम में लाया

गया परन्तु पीछे देशी पंडितों ने भी छात्रोपयोगी हिन्दी व्याकरण की रचना की। प्रारंभिक व्याकरण में 'भाषा चन्द्रोदय' (१८५६ ई0) बिहार के पं0 श्री लाल द्वारा (विशेष प्रसिद्ध), इसी समय उर्दू मार्तंड नामक एक व्याकरण प्रसिद्ध था, जिसका उल्लेख 'नवीनचन्द्र राय' ने अपने नवीनचन्द्रोदय में किया है। बाबू नवीनचन्द्र राय एक बंगाली सज्जन थे, जिन्होंने पंजाब में हिन्दी के प्रचार का प्रशंसनीय कार्य किया था। इन्होंने अपने व्याकरण की भूमिका में उर्दू मार्तंड के सम्बन्ध में लिखा– "उसमें यद्यपि हिन्दी शब्द के रूप प्रसिद्ध हुए हैं, वस्तुतः उसका उद्देश्य उर्दू भाषा के नियम ज्ञापन से है, इसलिये हिन्दी के यथार्थ व्याकरणों की गिनती में से उसे निकाल देना चाहिए।" नवीनचन्द्रोदय से पूर्व सभी हिन्दी व्याकरणों में संस्कृत शब्द जो हिन्दी में व्यवहृत होते हैं, उनके नियम नहीं दिये गए, क्योंकि तत्कालीन शिक्षा विभाग की भाषा सम्बन्धी नीति यही थी कि वे तत्सम शब्दों को हिन्दी मानते ही नहीं थे और तत्सम प्रधान हिन्दी को वे एक नए 'उच्च हिन्दी (हाई हिन्दी)' नाम से पुकारते थे। 'नवीन चन्द्रोदय' इस दृष्टि से हिन्दी का पहला व्याकरण था, जिसमें तत्सम शब्दों के लिए भी नियम दिए गए थे।

१७७५ ई0 में राजा शिव प्रसाद सितारेहिन्द ने बनारस से अपना 'हिन्दी व्याकरण' प्रकाशित कराया, जिसमें उन्होंने हिन्दी व्याकरण और उर्दू कवायद को निकट लाने का प्रयास किया। राजा साहब हिन्दी और उर्दू को एक ही भाषा मानते थे, जिनके बीच की खाई भिन्न शब्द भण्डार के कारण निरन्तर बढ़ती जा रही थी। व्याकरण की एकता के माध्यम से वे इस खाई को पाटना चाहते थे। राजासाहब ने हिन्दी और उर्दू के लिए एक ही प्रकार के नियम बनाने का प्रयास किया, जो भिन्न लिपियों में लिपिबद्ध होकर दोनों भाषाओं का एक ही व्याकरण बन सके । परन्तु उस सबसे एक नया विवाद उपस्थित हो गया कि हिन्दी और उर्दू दो भाषाएँ हैं या एक । सितारेहिन्द के व्याकरण के बाद लिखे गए व्याकरण ग्रन्थों में भी स्पष्ट दो परम्पराएँ मिलती हैं, कुछ व्याकरण तो हिन्दी और उर्दू को एक भाषा मानकर लिखे गए, कुछ हिन्दी को पूर्णतः स्वतन्त्र भाषा मानकर।

इस प्रकार हिन्दी व्याकरण के निर्माण की जो दो परम्पराएँ चलीं, उनमें हिन्दी उर्दू को एक भाषा मानने वालों का व्याकरण मूलतः अंग्रेजी व्याकरण का अनुसरण करता था। शिक्षा विभाग अंग्रेजी व्याकरण के अनुसरण पर लिखे गए व्याकरण को ही पसंद करता था। इसलिए पाठ्यक्रम में उन्हीं व्याकरणों को स्थान मिला करता था। अंग्रेजी व्याकरण के अनुरूप व्याकरण को सरकार केवल इसलिए पसन्द नहीं करती थी कि उसमें हिन्दी और उर्दू भाषाओं के लिए समान नियमावली होती थी; बल्कि इसीलिए भी कि अंग्रेज़ी सीखने में पर्याप्त सुविधा होती थी।

व्याकरण रचना के इस दूसरे दौर में राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द, भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, अम्बिकादत व्यास, दामोदर सप्रे शास्त्री, केशवराम भट्ट, सुधाकर द्विवेदी, माधव प्रसाद पाठक, सूर्यप्रसाद मिश्र प्रभृति चोटी के विद्वानों ने छात्रोपयोगी व्याकरणों की अपने ढंग से रचना की। इन व्याकरणों में छन्द रचना को भी व्याकरण में स्थान दिया गया एवं विशेषण और सर्वनाम शब्दों को अलग न मानकर संज्ञा के ही भेदों में परिगणित किया गया। संज्ञा के पाँच भेद जातिवाचक, व्यक्तिवाचक, गुणवाचक, भाववाचक और सर्वनाम किया, जिसमें गुणवाचक संज्ञा का ही दूसरा नाम विशेषण है। इस दौर के व्याकरणों में केशवराम भट्ट का हिन्दी व्याकरण विशेष लोकप्रिय हुआ।

व्याकरण–लेखन की परम्परा में पं0 कामता प्रसाद गुरू को हिन्दी का व्याकरण लिखने की आवश्यकता क्यों अनुभव हुई – यह प्रश्न विचारणीय है।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती के संपादक १९०३ ई0 में होने के पश्चात् अनुभव किया कि हिन्दी भाषा में अस्थिरता आ गई है। हिन्दी के विस्तृत भूखण्ड में जो साहित्य की रचना हो रही थी, उसमें एकरूपता का नितांत अभाव था। बात यह थी कि भारतेन्दु युग की प्रतिमित (स्टैंडर्ड) हिन्दी भाषा अधिकांश उच्चारण सम्मत और तद्भव प्रधान थी । हिन्दी का यह दावा रहा है कि इसमें जो लिखा जाता है, वही पढ़ा जाता है और बोला जाता है, वही लिखा जाता है। इस दावे के अनुसार भारतेन्दुयुगीन साहित्य में बोलचाल की भाषा का जैसा उच्चारण होता था, वैसा ही लिखा भी जाता था। हिन्दी एक बहुत ही विस्तृत भूखण्ड की भाषा थी, इस कारण एक प्रांत में किसी शब्द का जो उच्चारण होता था, दूसरे प्रान्त का उच्चारण उससे भिन्न होता था, इस प्रकार एक ही शब्द भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न रूप में लिखा जाता था। इसी प्रकार तद्भव शब्दों के प्रांतज प्रयोग भी अन्य प्रांतों की जनता के लिए बोधगम्य नहीं रह गये थे । द्विवेदी जी ने इस विस्तृत भूखंड की भाषा में एकरूपता और स्थिरता लाने के लिए व्याकरण सम्मत भाषा लिखने का आन्दोलन प्रारम्भ किया। सरस्वती में न0बर १९०५ में उन्होंने 'भाषा और व्याकरण' शीर्षक एक महत्त्वपूर्ण लेख लिख कर यह दिखाने का

प्रयास किया कि हिन्दी के लेखकगण लिखते समय व्याकरण की ओर ध्यान नहीं देते। इसी कारण भाषा में एकरूपता का अभाव है। द्विवेदी जी के इस लेख के प्रतिक्रियास्वरूप एक आन्दोलन–सा प्रारम्भ हो गया। 'भारतमित्र' के संपादक बालमुकुन्द गुप्त ने इस लेख में आए 'अनस्थिरता' शब्द और द्विवेदी जी ने भारतेन्दु युग के लेखकों की जो व्याकरण सम्बन्धी भूलें निकाली थीं, उसे लेकर नौ दस लेख 'भारतमित्र' में 'आत्माराम' के नाम से छपवाए और उसके उत्तर में गोविन्दनारायण मिश्र ने 'आत्माराम की टेंटें' शीर्षक लेख लिख कर गुप्त जी के आक्षेपों का उत्तर देने का प्रयास किया। इस वाद–विवाद में कटुता भी प्रदर्शित की गई, परन्तु उस लेखमाला से एक बात स्पष्ट हो गई कि हिन्दी में एकरूपता का अभाव है। दिल्ली वाले जहाँ लिखते है– 'लेखनी उठानी चाहिए'। वहाँ लखनऊ वाले लिखते हैं, 'लेखनी उठाना चाहिए'। दिल्ली वाले लिखते हैं 'शिक्षा लेनी होगी' वहाँ लखनऊ वाले 'शिक्षा लेना होगा' लिखते हैं। यह अन्तर प्रांतीय प्रयोगों के कारण था। इसी कारण लिखने में भी अनेकरूपता के दर्शन होते थे । ठहरना और ठैरता, सकता और सक्ता, पहचानता और पहचान्ता, मनोरथ और मनोर्थ दोनों रूप उस समय के लेखों में मिलते थे। द्विवेदी जी ने इसी अनेकरूपता को दूर कर विशाल हिन्दी क्षेत्र में एक समान भाषा के प्रयोग के लिए व्याकरणसंमत भाषा लिखने की आवश्यकता की ओर लेखकों का ध्यान आकृष्ट किया। कुछ लोगों ने इस प्रयत्न का मजाक भी उड़ाया। स्व0 पं0 चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने 'बुद्धू का काँटा' शीर्षक कहानी का प्रारम्भ इस प्रकार किया है– रघुनाथ पप्रसाददततत्रिवेदी – या रूग्नात पर्शाद तिर्वेदी – यह क्या ? लेकिन अधिकांश लोगों के मन में यह बात बैठ गई कि उच्चारण संमत भाषा लिखने से हिन्दी के विस्तृत भूखण्ड में भाषा की एकरूपता नष्ट हो जाएगी। इस प्रकार व्याकरण सम्मत भाषा लिखने की ओर लोगों की रूचि बढ़ी। परन्तु कठिनाई तो यह थी कि हिन्दी का कोई सर्वमान्य व्याकरण था ही नहीं । द्विवेदी जी ने अपने 'भाषा और व्याकरण' लेख में यही बात लिखी थी कि हिन्दी भाषा में एक सर्वमान्य व्याकरण अभी तक नहीं बना और अगस्त १६0८ ई0 की सरस्वती में पं0 कामताप्रसाद गुरू ने भी 'हिन्दी की हीनता' शीर्षक लेख में इसी प्रकार लिखा कि इस भाषा में न कोई माना हुआ व्याकरण है और न कोई प्रमाणिक कोश ।' नागरी प्रचारिणी सभा जो उस समय हिन्दी की हीनता दूर करने के लिए सब प्रकार के प्रयास कर रही थी, कोश और व्याकरण दोनों को पूरा करने में जुट गई।

पं0 कामताप्रसाद गुरू के द्वारा हिन्दी का सर्वमान्य व्याकरण –रचना का कार्यः

१८६४ ई0 को नागरी प्रचारिणी सभा ने हिन्दी में एक अच्छे व्याकरण के अभाव का अनुभव कर, इस कार्य के संपादन के लिए एक स्वर्णपदक प्रदान करने की घोषण की । सुफल न मिलने पर स्वतः सभा ने भाषातत्वज्ञ विद्वानों की संगति के आधार पर इस अनुष्ठान की पूर्ति का संकल्प किया था और सर्वश्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर', श्यामसुंदर दास एवं किशोरीलाल गोस्वामी को इसका कार्यभार सौंपा। यह प्रयत्न भी विशेष सफल न हुआ। इसके बाद सभा ने व्याकरण की रूपरेखा प्रस्तुत कर घोषणा की कि इस आधार पर लिखे गए व्याकरण पर ५00 का पुरस्कार दिया जायेगा । १६0३ ई८ में विचारार्थ सभा को तीन व्याकरण प्राप्त हुए इस कार्य के लिए हिन्दी के मूर्धन्य विद्वानों की समिति ने जिसमें सर्वश्री रामावतार शर्मा, गोविन्द नारायण मिश्र, श्यामसुन्दर दास, महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्याम बिहारी मिश्र, श्रीधर पाठक और लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी थे, इन्हें पुरस्कार के लिए उपयुक्त होने के कारण श्री गंगाप्रसाद को १८५रू८ तथा श्री रामकर्ण शर्मा को ५वरू0 का पुरस्कार दिया। अपने संकल्प की सर्वांगीण पूर्ति के लिए सभा ने इस बार यह कार्य दोनों व्याकरणों के आधार पर श्रीकामताप्रसाद गुरू को सौंपा । १६१७ ई0 से ही सभा की लेखमाला में इस व्याकरण का प्रकाशन क्रमशः आरम्भ हुआ और १६१८ ई0 तक हिन्दी का यह श्रेष्ठ व्याकरण इस क्रम में पूर्णतः प्रकाशित हो गया। इसे दोहराने के लिए सभा ने जिन सज्जनों की समिति गठित की थी उनमें से निम्नांकित विद्वानों ने बैठकों में भाग लेकर ग्रंथ के संशोधनादि कार्यों में अमूल्य सहायता दी। आचार्य पं0 महावीर प्रसाद द्विवेदी, साहित्याचार्य पं0रामावतार शर्मा, पं0 चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, लज्जाशंकर झा, पं0 रामनारायण मिश्र, श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' , श्री श्यामसुन्दरदास तथा पं0 रामचन्द्र शुक्ल। इस समिति द्वारा सुझाए गए संशोधनादि से युक्त हिन्दी व्याकरण १६२0 ई0 में पहली बार पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ। विभिन्न वर्गों एवं स्तरों के लिए इसे संक्षिप्त कर गुरूजी ने सभा के लिए अन्य व्याकरण प्रस्तुत किए। जैसे हाई स्कूल के लिए संक्षिप्त हिन्दी व्याकरण, मिडिल के लिए मध्य हिन्दी व्याकरण तथा आरम्भिक कक्षाओं के लिए इसका सबसे छोटा संस्करण प्रथम हिन्दी व्याकरण।

पं0 कामताप्रसाद गुरू के हिन्दी व्याकरण की उपलब्धि

पं0 कामताप्रसाद गुरू जी के अनुसार, "जिस शास्त्र में शब्दों का शुद्ध रूप और प्रयोगों के नियमों का निरूपण होता है, उसे ही व्याकरण कहते हैं।" लिखित भाषा के आधार पर व्याकरण के नियम निश्चित होते हैं। शिष्टजनों द्वारा स्वीकार शब्दों के रूप और प्रयोगों के नियम व्याकरण में समझाए जाते हैं । व्याकरण का शाब्दिक अर्थ – अच्छी तरह समझाना । वस्तुतः पं0 कामताप्रसाद गुरू जी ने हिन्दी के अधीन ही अपने हिन्दी व्याकरण का निर्माण किया। उन्होंने हिन्दी भाषा को नियमबद्ध करने के लिए हिन्दी व्याकरण की रचना नहीं की, बल्कि जो हिन्दी भाषा बोलचाल और लेखन में प्रयुक्त की जाती है, उसका वैयाकरणिक विश्लेषण किया । हिन्दी व्याकरण पढ़कर हिन्दी जगत ने शुद्ध बोलने और लिखने की रीति सीखी । हिन्दीतर भाषियों ने हिन्दी सीखते हुए हिन्दी व्याकरण में बोधगम्य नियमों की विस्तृत जानकारी वर्ण विचार, शब्द भेद , विकारी एवं अव्यय शब्द , व्युत्पति, वाक्यविन्यास, वाक्य प्रकरण आदि के विषय में विस्तृत ज्ञानराशि का संगत सूत्र उसी व्याकरण से प्राप्त किया। जैसे संसार की प्रत्येक घटना नियमबद्ध होती है, उसी प्रकार प्रत्येक भाषा नियमों के बंधन में बंधी है । हिन्दी व्याकरण में पं0 कामताप्रसाद गुरू जी ने हिन्दी भाषा के सिद्धांत और नियम स्थिर किए । हिन्दी भाषा की संरचना, उसकी शाब्दिक व्युत्पति और सुतार्किक संघटन के साथ उसका शुद्ध प्रयोग करना हिन्दी जगत को सिखाया। नागरी लिपि न जानने वालों ने पं0 कामताप्रसाद गुरू जी के व्याकरण सम्बन्धी सूत्रों को घोट घोट कर पिया तथा उनका प्रयोग आरम्भ किया। पं0 कामताप्रसाद गुरू जी ने शास्त्रीय व्याकरण को कलात्मक यथार्थ से समाविष्ट किया। वर्ण विन्यास, वाक्यों आदि के माध्यम से उनका हिन्दी व्याकरण पाणिनी की अष्टाध्यायी की तरह काल कसौटी पर खरा उतरा है। पं0 कामताप्रसाद गुरू जी के व्याकरण छपने के बाद से हिन्दी की स्थिति में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए । सबसे बड़ी बात तो यह हुई कि हिन्दी को विश्वविद्यालयों की बी0 ए0 तथा एम0 ए0 परीक्षा के लिए एक विषय के रूप में स्वीकृत किया गया। काशी और प्रयाग में विश्वविद्यालयों की बी0 ए0 तथा एम0 ए0 परीक्षा के लिए पाठ्यक्रम बने और हिन्दी विभागों की स्थापना हुई । ऊँची कक्षा के छात्र भाषा– शास्त्र का अध्ययन करने लगे और साथ ही व्याकरणों का ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन प्रारम्भ हो गया।

दूसरी ओर भारत की राजनीतिक एकता के लिए अंतः प्रान्तीय व्यवहार के लिए एक भाषा के माध्यम की आवश्यकता का अनुभव राजनीतिक और सामाजिक नेता करने लगे थे और सर्वसंगति से हिन्दी को इस गौरवपूर्ण पद के लिए स्वीकार किया। महात्मा गाांधी के नेतृत्व में हिन्दी को राष्ट्र भाषा का पद मिला और हिन्दी भाषी क्षेत्र में हिन्दी प्रचार के लिए प्रयत्न हुए। पहले दक्षिणी प्रचार सभा द्वारा दक्षिण भारत में हिन्दी का प्रचार किया गया, पीछे वर्धा में ' राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की स्थापना १९३६ ई0 में हुई उसकी शाखाएं देश के भिन्न–भिन्न प्रांतों में स्थापित कर हिन्दी सिखाने का कार्य आरम्भ हुआ। इस सबका आधार गुरू जी का हिन्दी व्याकरण रहा। इस व्याकरण की संरचना में पूर्वाग्रह त्याग का विषय के प्रति पूर्ण अनुराग और परिश्रमशील एक अध्ययन स्थिर कर व्याकरणिक नियमों का स्पष्टीकरण करते हुए जो उद्धरण दिए वे हिन्दी के विविध कालों के प्रख्यात प्रतिष्ठित लेखकों की रचनाओं से हैं। हिन्दी भाषा के सभी शिष्ट रूपों का प्रयोगात्मक विवेचन कर उन्होंने हिन्दी के अधुनातन व्याकरण का स्वरूप निर्धारित किया और अंग्रेजी व्याकरण के पैटर्न पर हिन्दी का व्यवस्थित व्याकरण निर्मित किया। उनके पूर्ववर्ती व्याकरणों ने संस्कृत प्रणाली पर वैयाकरणिक आर्दश स्थिर नहीं किया था। किन्तु गुरू जी ने सरसता और स्पष्टता के लिए सूत्र और भाष्य दोनों पद्धतियों को ग्रहण कर अष्टाध्यायी और महाभाष्य की परम्परा का हिन्दी में सूत्रपात किया । हिन्दी व्याकरण की पारिभाषिक शब्दावली बंगाली और मराठी भाषाओं के व्याकरण की शब्दावली से परिपूर्ण है। पं0 कामताप्रसाद गुरू जी ने हिन्दी व्याकरण के निर्माण के लिए जहाँ गंगाप्रसाद और रायकरण शर्मा के व्याकरणों की पृष्ठभूमि का संस्पर्श किया, वहीं उन्होंने महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'हिन्दी भाषा की उत्पति' ब्रिटानिया ऐंड साइक्लोपीडिया के 'हिन्दुस्तानी' पर अपने व्याकरण का अध्ययन निर्धारित किया। अरबी फारसी के शब्दों की उत्पति के लिए राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द लिखित हिन्दी व्याकरण और प्लाट्स रचित हिन्दुस्तानी ग्रामर का अध्ययन किया काले कृत 'उच्च संस्कृत व्याकरण' से उन्होंने अपने हिन्दी व्याकरण की पृष्ठभूमि स्थापित की। दामले विरचित शास्त्रीय मराठी व्याकरण की शैली पर भी हिन्दी व्याकरण आधारित है। गुरू जी ने अपने हिन्दी व्याकरण की भूमिका में लिखा है, "सबसे अधिक सहायता मुझे दामले कृत शास्त्रीय व्याकरण से मिली है जिसकी शैली पर मैंने अधिकांश में अपना व्याकरण लिखा है।"

पा० कामताप्रसाद गुरू जी का जन्म सागर (मध्यप्रदेश) में सन् 1875 ई० में हुआ । १७ वर्ष की आयु में ये इंटेंस की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। ये बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति थे और अनेक भाषाओं का इन्हें अच्छा ज्ञान था।

रचनाएँ

उपन्यास : 'सत्य','प्रेम','पार्वती','यशोदा'।
नाटक : 'सुदर्शन' (पौराणिक नाटक)
काव्य–ग्रंथ : 'भौमासुर वध', 'विनय पचासा' (ब्रजभाषा में)
'पद्य पुष्पावली' (खड़ी बोली में)
व्याकरण : 'भाषा वाक्य पृथक्करण'
सन् १६०१ से १६१० ई0 के बीच, प्रकाशक : बनारस के मेडिकल हाल प्रेस
'सहज हिन्दी रचना'
सन् १६११ ई0 में प्रकाशित
प्रकाशक : लखनऊ के मुंशी नवल किशोर के प्रेम से।
'हिन्दी व्याकरण सन् १६२१ ई0 में
प्रकाशक : नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी से।
विशेषः कामताप्रसाद गुरू जी की असाधारण ख्याति उनकी उपर्युक्त साहित्यिक कृत्तियों से नही, बल्कि उनके 'हिन्दी व्याकरण' के कारण है।' (डा0 नगेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास)